International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(1): 141-144

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(1): 141-144
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 02-11-2020
Accepted: 12-12-2020

डॉ० मोहन लाल
सहायक आचार्य, संस्कृत, राजकीय कन्या महाविद्यालय, शिमला, भारत

Corresponding Author:
डॉ० मोहन लाल
सहायक आचार्य, संस्कृत, राजकीय कन्या महाविद्यालय, शिमला, भारत

ऋषि के लक्षण, ऋषि भेद व वर्गीकरण

डॉ० मोहन लाल

सारांश :–
ऋषि वैदिक संस्कृत भाषा का शब्द है। यह शब्द अपने आप में वैदिक परंपरा का भी ज्ञान देता है। ऋषि शब्द की व्युत्पत्ति ऋषि गतौ धातु से मानी जाती है। इस व्युत्पत्ति का संकेत वायुपुराण, मत्स्यपुराण और ब्रह्माण्डपुराण में किया गया है। अपौरुषेय वेद ऋषियों के ही माध्यम से विश्व में आविर्भूत हुआ और ऋषियों ने वेद के वर्णमय विग्रह को अपने दिव्य श्रोत्र से श्रवण किया, इसीलिए वेद को श्रुति भी कहा गया है। आदि ऋषियों की वाणी के पीछे अर्थ दौड़ता–फिरता है। ऋषि अर्थ के पीछे कभी नहीं दौड़ते 'ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावतिः'। निष्कर्ष यह है कि तपस्या से पवित्र 'अंतर्ज्योति सम्पन्न मन्त्रद्रष्टा व्यक्तियों की संज्ञा ही ऋषि है। जो ज्ञान के द्वारा मंत्रो को अथवा संसार की चरम सीमा को देखता है, वह ऋषि कहलाता है। ऋषि एक बहुविकल्पी शब्द है। आधुनिक बातचीत में मुनि, योगी, सन्त अथवा कवि इनके पर्याय नाम हैं। पराशर, दुर्वासा, वेदव्यास, शुकदेव, धौम्य, वसिष्ठ, परशुराम, किंदम तथा अगस्त्य आदि अनेक ऋषि प्राचीन भारतीय समाज में प्रसिद्ध थे। ऋषि भारत की प्राचीन परम्परा के अनुसार श्रुति ग्रंथों को दर्शन करने वाले जनों को कहा जाता है। सामान्यतः वेदों की ऋचाओं का साक्षात्कार करने वाले ऋषि कहे जाते थे। ऐसे व्यक्ति तो सम्यक आहार–विहार आदि करते हुए ब्रह्मचारी रहकर संशय और से परे हैं और जिसके श्राप और अनुग्रह फलित होने लगे हैं उस सत्यप्रतिज्ञ और समर्थ व्यक्ति को ऋषि कहा गया है। ऋषि का स्थान तपस्वी और योगी की तुलना में उच्चतम होता है। अमरसिंह द्वारा संकलित प्रसिद्ध संस्कृत समानार्थी शब्दकोश में सात प्रकार के ऋषियों का उल्लेख है :– ब्रह्मर्षि, देवर्षि, महर्षि, परमर्षि, काण्डर्षि, श्रुतर्षि और राजर्षि। ऋषि का स्थान तपस्वी और योगी की तुलना में उच्चतम होता है। अमरसिंह द्वारा वैदिक काल में ये सात प्रकार के ऋषिगण होते थे। उनके सात प्रकार हैं – व्यासादि महर्षि, भेलादि परमर्षि, कण्वादि देवर्षि, वसिष्ठादि ब्रह्मर्षि, सुश्रुतादि श्रुतर्षि, ऋतुपर्णादि राजर्षि और जैमिनि आदि काण्डर्षि। अमर कोष अन्य प्रकार के संतों, संन्यासी, परिव्राजक, तपस्वी, मुनि, ब्रह्मचारी, यती इत्यादि से ऋषियों को अलग करता है।

कूट शब्दः ऋषि के लक्षण, ऋषि वैदिक, वायुपुराण, मत्स्यपुराण और ब्रह्माण्डपुराण

प्रस्तावना
ऋषि :– 'ऋषि' शब्द की व्युत्पत्ति ऋषि गतौ धातु[1] से मानी जाती है। ऋषति प्राप्नोति सर्वान् मन्त्रान्, ज्ञानेन पश्यति संसारपारं वा। ऋषु+इगुपधात् कित् इति उणादिसूत्रेण इन् किञ्च[2]। इस व्युत्पत्ति का संकेत वायु पुराण, मत्स्य पुराण तथा ब्रह्माण्ड पुराण में किया गया है। ब्रह्माण्ड पुराण की व्युत्पत्ति इस प्रकार है।

गत्यर्थादृषतेर्धातोर्नाम निवृत्तिरादितः।
यस्मादेव स्वयंभूतस्तस्माच्चाप्यृषिता स्मृता।।[3]

वायु पुराण में ऋषि शब्द के अनेक अर्थ बताए गए हैं–

ऋषित्येव गतौ धातुः श्रुतौ सत्ये तपस्यथ।
एतत् संनियतस्तस्मिन् ब्रह्मणा स ऋषि स्मृतः।।[4]

इस श्लोक के अनुसार 'ऋषि' धातु के चार अर्थ होते हैं– गति, श्रुति, सत्य तथा तपस्। ब्रह्मा द्वारा जिस व्यक्ति में ये चारों वस्तुएँ नियत कर दी जाय, वही 'ऋषि' होता है।

वायु पुराण का यही श्लोक मत्स्य पुराण में भी कुछ भेद से प्राप्त होता है। यास्काचार्य की निरुक्ति है – ऋषिर्दर्शनात्।[5] इस निरुक्ति से ऋषि का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है, दर्शन करने वाला, तत्त्वों की साक्षात् अपरोक्ष अनुभूति रखने वाला विशिष्ट पुरुष। निरुक्तकार यास्काचार्य का कथन 'साक्षात्कृतधर्माणः ऋषयो बभूवुः'[6] इस निरुक्ति का प्रतिफलितार्थ है। ऋषिगण धर्म (वैदिक ज्ञान) का साक्षात्कार किए हुए थे, उन्होंने धर्म का साक्षात्कार न किए हुए दूसरे लोगों को उपदेश द्वारा मंत्र दिए। तैत्तिरीय आरण्यक के अनुसार इस शब्द की व्याख्या इस प्रकार है कि 'सृष्टि के आरम्भ में तपस्या करने वाले अयोनिसंभव व्यक्तियों के पास स्वयंभू ब्रह्म स्वयं प्राप्त हो गया।[7] वेद का इस स्वतः प्राप्ति के कारण, स्वयमेव आविर्भाव होने के कारण ही ऋषि का 'ऋषित्व' है। इस व्याख्या में ऋषि शब्द की निरुक्ति 'तुदादिगण ऋष् गतौ' धातु से मानी गयी है। अपौरुषेय वेद ऋषियों के ही माध्यम सं विश्व में आविर्भूत हुआ और ऋषियों ने वेद के वर्णमय विग्रह को अपने दिव्य श्रोत्र से श्रवण किया, अतः वेद को श्रुति भी कहा गया है। संस्कृत कवि भवभूति के नाटक उत्तररामचरितम् के अनुसार आदि ऋषियों की वाणी के पीछे अर्थ दौड़ता है, ऋषि अर्थ के पीछे कभी नहीं दौड़ते 'ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावतिः।[8] निष्कर्ष यह है कि तपस्या से पवित्र 'अंतर्ज्योति सम्पन्न मन्त्रद्रष्टा व्यक्तियों की ही संज्ञा ऋषि है। कल्प के आदि में सर्वप्रथम इस अनादि वैदिक शब्द–राशि का प्रथम उपदेश ब्रह्मा जी के हृदय में हुआ और ब्रह्मा से परम्परागत अध्ययन–अध्यापन होता रहा, जिसका निर्देश 'वंश ब्राह्मण' आदि ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। अतः समस्त वेद की परम्परा के मूल पुरुष ब्रह्मा (ऋषि) हैं। इनका स्मरण परमेष्ठी प्रजापति ऋषि के रूप में किया जाता है। परमेष्ठी प्रजापति की परम्परा की वैदिक शब्दराशि के किसी अंश के शब्द तत्त्व का जिस ऋषि ने अपनी तपश्चर्या के द्वारा किसी विशेष अवसर पर प्रत्यक्ष दर्शन किया, वह भी उस मंत्र का ऋषि कहलाया। उस ऋषि का यह ऋषित्व शब्दतत्त्व के साक्षात्कार का कारण माना गया है। एक ही मंत्र का शब्दतत्त्व–साक्षात्कार अनेक ऋषियों को भिन्न–भिन्न रूप से या सामूहिक रूप से हुआ था। अतः वे सभी उस मंत्र के ऋषि माने गये हैं।

कल्प ग्रन्थों के निर्देशों में ऐसे व्यक्तियों को भी ऋषि कहा गया है, जिन्होंने उस मंत्र या कर्म का प्रयोग तथा साक्षात्कार अति श्रद्धापूर्वक किया है।

वैदिक ग्रन्थों विशेषतया पुराण–ग्रन्थों के मनन से यह भी पता लगता है कि जिन व्यक्तियों ने किसी मंत्र का एक विशेष प्रकार के प्रयोग तथा साक्षात्कार से सफलता प्राप्त की है, वे भी उस मंत्र के ऋषि माने गये हैं।

ऋषियों के प्रकार :– वेद, ज्ञान का प्रथम प्रवक्ता, परोक्षदर्शी, दिव्य दृष्टि वाला। जो ज्ञान के द्वारा मंत्रों को अथवा संसार की चरम सीमा को देखता है, वह ऋषि कहलाता है। उसके सात प्रकार हैं– व्यासादि व्यासादि महर्षि, भेलादि परमर्षि, कण्वादि देवर्षि, वसिष्ठादि ब्रह्मर्षि, सुश्रुतादि श्रुतर्षि, ऋतुपर्णादि राजर्षि और जैमिनि आदि काण्डर्षि। रत्नकोष में भी कहा गया है–

सप्त ब्रह्मर्षि–देवर्षि–महर्षि–परमर्षयः।
काण्डर्षिश्च श्रुतर्षिश्च राजर्षिश्च क्रमावराः।।[9]

अर्थात् ब्रह्मर्षि, देवर्षि, महर्षि, परमर्षि, काण्डर्षि, श्रुतर्षि, राजर्षि ये सातों क्रम अवर है। ऋषि वैदिककालीन कुलों, राजसभाओं तथा संभ्रान्त लोगों से सम्बन्धित होते थे। कुछ राजकुमार भी समय –समय पर ऋचाओं की रचना करते थे, उन्हें राजन्यर्षि कहते थे। आजकल उसका शुद्ध रूप राजर्षि है।

संहिताओं में ऋषि :– संहिता का अर्थ है संग्रह। संहिताओं में विभिन्न देवताओं के स्तुतिपरक मंत्रों का संकलन है। मनुष्य जाति के प्राचीनतम इतिहास, सामाजिक नियम, राष्ट्रधर्म, सदाचार, कला, त्याग, सत्य आदि का ज्ञान प्राप्त करने के लिए एकमात्र साधन वेद ही है। प्राचीन परम्परा के अनुसार वेद नित्य और अपौरुषेय हैं। सृष्टि के प्रारम्भ में परमात्मा ने इनका प्रकाश अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा नामक ऋषियों को दिया। प्रत्येक वैदिक मंत्र का देवता और ऋषि होता है। मंत्र में जिसकी स्तुति की जाय वह उस मंत्र का देवता है और जिसने मंत्र के अर्थ का सर्वप्रथम प्रदर्शन किया हो वह उसका ऋषि है। पाश्चात्य विद्वान् ऋषियों को ही वेद–मंत्रों का रचयिता मानते हैं। वैदिक साहित्य को श्रुति भी कहा जाता है, क्योंकि ऋषियों ने इस साहित्य को श्रवण–परम्परा से ग्रहण किया था। उन ऋषियों को मंत्रद्रष्टा कहा गया। वेदों में ही ऋषियों द्वारा लिखा गया है– 'तेन ब्रह्महृदया य आदिकवये' अर्थात् कल्प के प्रारम्भ में आदि कवि ब्रह्मा के हृदय में वेद का प्राकट्य हुआ था। वैदिक मंत्रो की रचना में भी अनेकानेक ऋषियों का योगदान रहा है। पर इनमें भी सात ऋषि ऐसे हैं जिनके कुलों में मंत्र रचयिता ऋषियों की एक लम्बी परम्परा रही। ये कुल परम्परा ऋग्वेद के सूक्त दस मण्डलों में संग्रहित हैं और इनमें दो से सात यानी छह मण्डल ऐसे है जिन्हें हम परम्परा से वंश मण्डल कहते हैं क्योंकि इनमें छह ऋषिकुलों के ऋषियों के मंत्र इकट्ठा किए गए हैं। वेदाध्ययनोपरान्त जिन सात ऋषियों या ऋषिकुल के नामों का पता चलता है वे नाम क्रमशः इस प्रकार है – वसिष्ठ, विश्वामित्र, कण्व, भारद्वाज, अत्रि, वामदेव और शौनक।

संहिता के प्रत्येक सूक्त में ऋषि, देवता, छन्द और विनियोग लिखे रहते हैं। वेदार्थ ज्ञान हेतु इन चारों को जानना आवश्यक होता है। शौननकी अनुक्रमणी में लिखा है कि जो ऋषि, देवता, छन्द और विनियोग का ज्ञान प्राप्त किए बिना वेद का अध्ययन, अध्यापन, हवन, यजन, याजन आदि करते है, उनका सब कुछ निष्फल हो जाता है तथा ऋष्यादि के ज्ञान के साथ जो वेदार्थ भी जानते हैं, उनको अतिशय फल प्राप्त होता है। याज्ञवल्क्य और व्यास ने भी अपनी स्मृतियों में इस कथन की पुष्टि की गयी है। जैसा कि कहा गया है– 'ऋषिर्दर्शनात्' अर्थात् मंत्र को देखने वाले या साक्षात्कार करने वाले को ऋषि कहा जाता है। महर्षि कात्यायन ने सर्वाक्रमसूत्र में ऋषि को स्मर्ता वा द्रष्टा बताया है। जिन ऋषि ने जिस सूक्त का आविष्कार किया उनका व उनके वंश का सूक्त का नाम रहता है।

ऋग्वेद :– ऋषि के लक्षणों का वर्णन ऋग्वेद में इस प्रकार किया गया है– ऋषि वह है जो यज्ञों (श्रेष्ठ कर्मों) का सम्पादन करता है, जो स्वयं यज्ञ के समान पवित्र एवं निर्दोष है और शुभ कार्यों को ही करता है। जीवन रथों को शीघ्र प्रेरणा देता है, जो कुटिल, दुराचारी, व्यभिचारी व्यक्तियों को भी अपनी सुप्रेरणा से सुपथ पर चलता है। बिना किसी भेदभाव के, बिना पक्षपात के मनुष्यमात्र का हितसाधक हो। ज्ञानियों व बुद्धिमान व्यक्तियों का मित्र है। मनुष्य–मात्र की परिधि से भी आगे बढ़कर प्राणिमात्र के कष्टों और दुःखों को दूर करता है।

प्रत्यर्धिर्यज्ञानामश्वहयो रथानाम्।
ऋषिः स यो मनुर्हितो विप्रस्य यावयत्यखः।।[10]

ऋग्वेद में कुत्स, अत्रि, रेभ, अगस्त्य, कुशिक, वसिष्ठ, व्यश्वादि ऋषियों के नाम प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद के दस मण्डलों में से द्वितीय मण्डल के गृत्समद, तृतीय के विश्वामित्र, चतुर्थ के वामदेव, पञ्चम के अत्रि, षष्ठ के भारद्वाज और सप्तम के वसिष्ठ और इनका परिवार ऋषि हैं। अष्टम मण्डल के ऋषि कण्व और उनके वंशज और गोत्रज हैं। आश्वलायन ने प्रगाथ–परिवार को अष्टम मण्डल का ऋषि माना है, परन्तु षड्गुरुशिष्य ने प्रगाथ को कण्व ही माना है। नवम मण्डल के अनेक ऋषि हैं। आश्वलायन के अनूसार दशम मण्डल के ऋषि क्षुद्रसुक्त और महासूक्त हैं, परन्तु वस्तुतः दशम मण्डल के ऋषि और उनके वंशज अनेकानेक हैं।

अथर्ववेद :– अथर्ववेद में ऋषियों की बहुत बडी तालिका है, जिनमें अंगिरा, अगस्ति, जमदग्नि, अत्रि, कश्यप, वसिष्ठ, भारद्वाज, गविष्ठर, विश्वामित्र, कुत्स, मेधातिथि, त्रिशोक, उशना काव्य, गौतम तथा मुदगल के नाम सम्मिलित हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थ :– यद्यपि प्राचीन परम्परा में 'मंत्रब्राह्मणयोः वेदनामधेयम्' के अनुसार ब्राह्मण वेद का ही एक भाग है। तथापि संहिताओं के बाद ब्राह्मण–ग्रन्थों का निर्माण हुआ माना जाता है। इसमें यज्ञों के कर्मकाण्ड का विस्तृत वर्णन है, साथ ही शब्दों की व्युत्पत्तियॉ तथा प्राचीन राजाओं और ऋषियों की कथाऍ तथा सृष्टि–संबन्धी विचार हैं। इसके समय में कुरु–पांचाल आर्य संस्कृति का केन्द्र था, इसमें पुरुरवा और उर्वशी की प्रणय–गाथा, च्वयन ऋषि तथा महाप्रलय का आख्यान, जनमेजय, शकुन्तला और भरत का उल्लेख है।

उपनिषदों में ऋषि :– उपनिषद् अध्यात्मविद्या के विविध अध्याय हैं जो विभिन्न अंतःप्रेरित ऋषियों द्वारा लिखे गए हैं। मानवीय कल्पना, चिन्तन–क्षमता, अंतर्दृष्टि की क्षमता जहॉ तक उस समय के दार्शनिकों, मनीषियों या ऋषियों को पहुॅचा सके उन्होंने पहुॅचाने का भरसक प्रयत्न किया।

बृहदारण्यकोपनिषद् :– बृहदारण्यकोपनिषद् में गौतम, भारद्वाज, विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ, कश्यप एवं अत्रि आदि ऋषियों के नामों का उल्लेख हैं।

स्मृतियों में ऋषि :– मनुस्मृति के अनुसार वेद ही सर्वोच्च और प्रथम प्राधिकृत है। वेद किसी भी प्रकार के ऊँच–नीच, जात–पात, महिला–पुरुष आदि के भेद को नहीं मानते। ऋग्वेद की ऋचाओं में लगभग 414 ऋषियों जिनमें लगभग 30 नाम महिला ऋषियों के हैं। इस स्मृति में वर्णन प्राप्त होता है कि प्राचीनकरल के ऋषियों ने उत्कट तपस्या द्वारा अपने तपःपूत हृदय में परावाक् वेदवाङ्मय का साक्षात्कार किया था, अतः ऋषि मंत्रदृष्टा कहलाए – 'ऋषयो मंत्रदृष्टारः'

महाभारत में ऋषि :– महाभारत में सप्तर्षियों की दो नामावलियां प्राप्त होती हैं। एक नामावली में कश्यप, अत्रि, भारद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और वसिष्ठ के नाम आते हैं तो दूसरी नामावली में कश्यप, वसिष्ठ, मरीचि, अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह और क्रतु के नाम आते हैं।

पुराणों में ऋषि :– पुराणों के मुख्य विषय सर्ग (सृष्टि रचना), प्रलय, मन्वन्तर और युगों का वर्णन, देव, ऋषि तथा राजाओं के वंशों का वर्णन कहा गया है। पुराणों में सप्त ऋषि के नाम पर भिन्न–भिन्न नामावली मिलती है। विष्णुपुराणानुसार सातवें मन्वन्तर के सप्तर्षि वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, जमदग्नि, गौतम, विश्वामित्र और भारद्वाज हैं।

वसिष्ठकाश्यपो यात्रिर्जमदग्निस्सगौत।
विश्वामित्रभारद्वाजौ सप्त सप्तर्षयोभवन।।[11]

पुराणों में सप्त ऋषि– केतु, पुलह, पुलस्त्य, अत्रि, अंगिरा, वसिष्ठ तथा भृगु हैं। संध्यावदनं की सप्त ऋषि की सूची में अत्रि, भृगु, कौत्स, वसिष्ठ, गौतम, कश्यप और अंगिरस हैं। एतदतिरिक्त अन्य नामावली में क्रमशः केतु, पुलह, पुलस्त्य, अत्रि, अंगिरा, वसिष्ठ तथा मारीचि है। मत्स्य पुराण के द्वितीय खण्ड में भृगु, अंगिरस, अत्रि, कुशिक, कश्यप, वसिष्ठादि सभी प्रमुख ऋषियों के नाम, गोत्र, वंश प्रवर स्पष्ट रूप में दिए गए हैं। यही ऋषि भारतीय संस्कृति के जनक माने जाते हैं और अधिकांश पौराणिक उपाख्यान इन्हीं वंशों से किसी न किसी रूप से संबन्धित है। कुछ पुराणों में कश्यप और मरीचि को एक माना गया है तो कहीं कश्यप और कण्व को पर्यायवाची माना गया है।

मत्स्यपुराणानुसार ब्रह्मा जी द्वारा कृत हवन से हुताशन की उत्पत्ति हुई थी। तदुपरान्त महान् तेज वाले तपों के निधि भृगुदेव समुत्पन्न हुए। अंगारों से अंगिरा और हुताशन की अर्चियों से अत्रि ऋषि की उत्पत्ति हुई थी तदनन्तर मरिचियों से महान् तपस्वी महर्षि मरीचि उत्पन्न हुए थे। केशों से कपिश और महान् तपस्वी पुलस्त्य उत्पन्न हुए। वसु के मध्य से तप के ही धन वाले वसिष्ठ ऋषि प्रसूत हुए थे। भृगु ऋषि ने पुलोमा की पत्नी को अपनी दिव्य भार्या बनाया था। इसी भार्या से महर्षि के द्वादश याज्ञिक सुत उत्पन्न हुए।[12]

स्मृति–पुराणों में ब्राह्मण के आठ भेदों का वर्णन मिलता है– मात्र, ब्राह्मण, श्रोत्रिय, अनुचान, भ्रूण, ऋषिकल्प, ऋषि और मुनि। जो कोई भी व्यक्ति सभी वेदों, स्मृतियों और लौकिक विषयों का ज्ञान प्राप्त कर मन और इन्द्रियों को वश में करके आश्रम में सदा ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए निवास करता है उसे ऋषिकल्प कहा जाता है। ऐसे व्यक्ति जो सम्यक आहार–विहार आदि करते हुए ब्रह्मचारी रहकर संशय और संदेह से परे हैं और जिसके श्राप और अनुग्रह फलित होने लगे हैं उस सत्यप्रतिज्ञ और समर्थ व्यक्ति को ऋषि कहा गया है।

वैखानस :– ऋषियों का यह समूह ब्रह्मा जी के नख से उत्पन्न हुआ था।

वालखिल्य :–ऋषियों का यह समूह ब्रह्मा जी के रोम से प्रकट हुआ था।

संप्रक्षाल :– ऋषियों का यह समूह भोजन के बाद बर्तन धो–पोछकर रख देते, दूसरे समय के लिए कुछ नहीं बचाते हैं।

मरीचिप :– सूर्य और चन्द्र की किरणों का पान करके रहते हैं।

बहुसंख्यक अश्म्कुट :– कच्चे अन्न को पत्थर से कूटकर खाते हैं।

पत्राहार :– मात्र पत्तों का आहार करते हैं।

दंतोलूखली :– दांतों से ही ऊखल का काम करते हैं।

उन्मज्ज्क :– कंठ तक पानी में डूब कर तपस्या करते हैं।

गात्रशय्य :– शरीर से ही शय्या का काम लेते हैं, भुजाओं पर सिर रख कर सोते हैं।

अश्य्य :– शय्या के साधनों से रहित, सोने के लिए नीचे कुछ भी नहीं बिछाते हैं।

अनवकाशिक :– निरन्तर सत्कर्म में लगे रहते हैं और ये कभी छुट्टी नहीं लेते हैं। सामाजिक परिवर्तन और विकास करते हैं।

सलिलाहार :– जल पीकर रहते हैं।

वायुभक्ष :–हवा पी कर रहते हैं।

आकाश निलय :– खुले मैदान में रहते हैं, बारिश होने पर वृक्ष के नीचे पनाह लेते हैं।

स्थनिडन्लाशाय :– ये ऋषि वेदी पर सोने वाले होते हैं।

उर्ध्वासी :– ये ऋषि पर्वत, शिखर या ऊंचे स्थानों पर रहने वाले होते हैं।

दांत :– ये ऋषि मन और इन्द्रियों को वश में रखने वाले होते हैं।

आर्द्रपटवासा :– ऋषियों के ये समूह हमेशा भीगे कपड़े पहनता हैं।

सजप :– ऋषियों के ये समूह हमेशा और निरंतर जप करते रहते हैं।

तपोनिष्ठ :–ऋषियों के ये समूह हमेशा तपस्या या ईश्वर के विचारों में स्थित रहते वाले होते हैं।

प्रशिक्षक:– 21वें ऋषि वे होते हैं जो आश्रम बनाकर रहते हैं और आश्रम में प्रशिक्षण देते हैं।

वैदिक नामावली के अनुसार वैवस्वत मनु के काल में जन्में सात महान ऋषियों का संक्षिप्त परिचय। आकाश में सात तारों का एक मण्डल नज़र आता है उन्हें सप्तर्षियों का मण्डल कहा जाता है। उक्त मण्डल के तारों के नाम भारत के महान् सात संतो के आधार पर ही रखे गए हैं। प्रत्येक मन्वन्तर में सात–सात ऋषि हुए हैं।

वसिष्ठ :– राजा दशरथ के कुलगुरु ऋषि वसिष्ठ सुप्रसिद्ध है। ये दशरथ के चारों पुत्रों के गुरु थे। वसिष्ठ की आज्ञानुसार दशपुत्रों ने ऋषि विश्वामित्र के आश्रम में जाकर असुरों का वध किया था। वसिष्ठ ने राजसत्ता पर अंकुश का विचार दिया तथा उन्हीं के कुल के मैत्रावरुण वसिष्ठ ने सरस्वती नदी के तट पर सौ (100) सूक्त एक साथ रचकर इतिहास बनाया।

विश्वामित्र :– ऋषि होने के पूर्व विश्वामित्र राजा थे और ऋषि वसिष्ठ से कामधेनु गाय को हड़पने के लिए उन्होंने युद्ध किया था, परन्तु वे विजयी नहीं हुए। इस हार ने ही उन्हें घोर तप हेतु प्रेरित किया। विश्वामित्र की तपस्या और मेनका द्वारा उनकी तपस्या भंग करने की कथा जगत प्रसिद्ध है। विश्वामित्र ने तपस्या के बल पर त्रिशंकु को सशरीर स्वर्ग भेज दिया था।

कण्व :– कण्व वैदिक कालीन ऋषि थे। देश के अतीव महत्त्वपूर्ण सोमयज्ञ को कण्वों ने व्यवस्थित किया। इन्हीं के आश्रम में हस्तिनापुर के राजा दुष्यंत की पत्नी शकुन्तला एवं उनके पुत्र भरत का पालन–पोषण हुआ था।

भारद्वाज :– वैदिक ऋषियों में भारद्वाज ऋषि का उच्च स्थान है। भारद्वाज के पिता बृहस्तपति और माता ममता थी। ऋग्वेद के षष्ठ मण्डल के द्रष्टा भारद्वाज ऋषि हैं। इस मण्डल में भारद्वाज के 756 मंत्र हैं। अथर्ववेद में भी भारद्वाज के 23 मंत्र मिलते हैं।

अत्रि :– ऋग्वेद के पंचम मण्डल के द्रष्टा महर्षि अत्रि ब्रह्मा के पुत्र, सोम के पिता और कर्दम प्रजापति व देवहूति की पुत्री अनुसूया के पति थे। अत्रि ऋषि का आश्रम चित्रकूट में था। अत्रि–दम्पति की तपस्या और त्रिदेवों की प्रसन्नता के फलस्वरूप विष्णु के अंश से महायोगी दत्तात्रेय, ब्रह्मा के अंश से चन्द्रमा तथा शंकर के अंश से महामुनि दुर्वासा महर्षि अत्रि एवं देवी अनुसूया के पुत्र रूप में जन्मे।

वामदेव :– वामदेव ने इस देश को सामगान (संगीत) दिया। वामदेव ऋग्वेद के चतुर्थ मण्डल के द्रष्टा, गौतम ऋषि के पुत्र तथा जन्मत्रयी के तत्त्ववेत्ता माने जाते हैं।

शौनक :– वैदिक आचार्य और ऋषि जो शुनक ऋषि के पुत्र थे। शौनक ने दस हजार विद्यार्थियों के गुरुकुल को चलाकर कुलपति का विलक्षण सम्मान हासिल किया ।

एतदतिरिक्त अगस्त्य, कश्यप, अष्टावक्र, याज्ञवलक्य, कात्यायन, ऐतरेय, कपिल, जैमिनी, गौतम आदि सभी ऋषि उक्त सात ऋषियों के कुल के होने के कारण इन्हें भी वही दर्जा प्राप्त है।

निष्कर्ष :–

सामान्यतः लोग ऋषि, मुनि, तपस्वी, योगी और संन्यासी की परिभाषा या अर्थ एक ही समझते हैं, जो कि संसार की सब मोहमाया त्यागकर, लोगों को ज्ञान बांटता चले और जनमानस की भलाई के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दे। जिनके जटा–जूट हो, रुद्राक्ष की माला डाली हो या जिसके पास कमण्डल हो और बड़ी–बड़ी मूंछ हो। परन्तु ऐसा कदापि नहीं है। ऋषि वैदिक–संस्कृत भाषा का शब्द है। यह शब्द अपने आप में एक वैदिक परम्परा का ज्ञान भी देता है। ऋषि का स्थान तपस्वी और योगी की तुलना में उच्चतम होता है। अमरकोष अन्य प्रकार के संतों– संन्यासी, परिव्राजक, तपस्वी, मुनी, ब्रह्मचारी, यती इत्यादि से ऋषियों को अलग करता है। ऋषि को द्रष्टा कहा गया है और वेदों को ईश्वर वाक्य। ऋषियों के मन या विचार की उपज नहीं है। ऋषियों ने वह लिखा या कहा जैसा कि उन्होंने पूर्ण जाग्रत अवस्था में देखा, सुना और परखा। भारत में पुरुषों के साथ ही भारतीय महिला दार्शनिकों तथा साध्वियों की लम्बी परम्परा रही है। वेदों की ऋचाओं को गढ़ने में भारत की बहुत सी स्त्रियों का योगदान रहा है उनमें से ही एक है गर्गवंश में वचक्नु नामक महर्षि की पुत्री 'वाचकन्वी गार्गी। प्रसिद्ध ऋषियों के वंशजो ने अपने ऋषिकुल या गोत्र के नाम को ही उपनाम की तरह अपना लिया, उदाहरणार्थ भगवन् परशुराम भी भृगुकुल के थे। भृगुकुल के वंशज भार्गव कहलाए, इसी तरह गौतम, अग्निहोत्री, गर्ग, भरद्वाज आदि।

सन्दर्भ :–

1. सिद्धान्त कौमुदी, 1827
2. वही, 4/119
3. ब्रह्माण्डपुराण, 1/32/87
4. वायुपुराण, 7/75
5. निरुक्त, 3/11
6. निरुक्त, 1/20
7. तैत्तिरीय आरण्यक, 2/9
8. उत्तररामचरितम्, 1/10
9. रत्नकोष, 553
10. विष्णुपुराण, 3/115
11. मत्स्यपुराण, 2/77/8–12
12. ऋग्वेद, 10/26/5